रमाकान्त शुक्ल का साहित्यिक परिचय

बिनाता दास [1], डॉ॰ सुमित शर्मा [2]

[1] शोधार्थी, [2] निर्देशक, सहायक प्रोफेसर,
सिंघानिया विश्वविद्यालय, बड़ी पचेरी, झुंझुनू, राजस्थान।

Published in IJIRMPS (E-ISSN: 2349-7300), Volume 11, Issue 5, (September-October 2023)

License: Creative Commons Attribution-ShareAlike 4.0 International License

सार

डॉ॰ रमाकान्त शुक्ल जी का जन्म उतरप्रदेश के बुलन्दशहर जनपद की खुर्जा तहसील में हुआ था। आपकी वास्तविक सुसंस्कृत जन्मतिथि पौष, कृष्ण पक्ष तृतीय वि॰सं॰ 1997 (24 दिसम्बर 1940) है। उतरप्रदेश के जिले मुजफ्फरनगर के चरथावल कस्बे के निवासी वसिष्ठगोत्रीय गौड़ ब्राह्मण स्व॰ पं॰ बद्रीदत शुक्ल आपके प्रपितामह थे। शुक्ल जी के पितामह स्व॰ माई दयालु शुक्ल थे। इनके पिता आचार्य ब्रह्मानन्द शुक्ल राधाकृष्ण संस्कृत महाविद्यालय खुर्जा में साहित्य विभाग के अध्यक्ष थे। वात्सल्यमयी माता प्रियम्वदा शुक्ला थी। इनके पाँच पुत्र थे उनमें डॉ॰ कृष्णकान्त शुक्ल अध्यक्ष, संस्कृत, बरेली कालेज बरेली, ट्रेन-दुर्घटना में असमय काल-कवलित हो गए। डॉ॰ उमाकान्त शुक्ल मुजफ्फरनगर के एस॰डी॰ कॉलेज के संस्कृत विभाग में रीडर पद से सेवानिवृत हुए हैं। डॉ॰ विष्णुकान्त शुक्ल सहारनपुर के जे॰वी॰ जैन कॉलेज के हिन्दी विभागाध्यक्ष पद से सेवानिवृत हुए हैं।

शुक्ल जी का विवाह श्री राजाराम शर्मा की पुत्री रमा देवी के साथ हुआ था। इनके चार पुत्र हुए, जिनमें दूसरे नम्बर का पुत्र (शशांक शेखर) एक मास की आयु में ही दिवंगत हो गया। शेष तीन पुत्र चन्द्रमौलि शुक्ल, आनन्दवर्धन शुक्ल और अभिनव शुक्ल हैं। सभी विवाहित हैं।

शिक्षा

डॉ॰ रमाकान्त शुक्ल जी की प्रारम्भिक शिक्षा उनके कस्बे (खुर्जा) के ही प्राइमरी स्कूल नं॰ 1 से प्रारम्भ हुई। आपने प्रथमा, पूर्वमध्यमा, उतरमध्यमा, शास्त्री (साहित्य) साहित्याचार्य, इण्टरमीडियट, बी॰ए॰, एम॰ए॰ हिन्दी तथा एम॰ए॰ संस्कृत पूर्वाध की परीक्षा 1949-1962 में श्री राधाकृष्ण संस्कृत कालेज एवं एन॰आर॰ई॰सी॰ कालेज खुर्जा में तथा अलीगढ़ के श्री वाष्र्णेय कालेज से उतीर्ण की। आपने 1961 में एम॰ए॰ हिन्दी में स्वर्ण पदक प्राप्त किया। आपने साहित्याचार्य की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उतीर्ण की। 1964 में शिक्षक परीक्षार्थी के रूप में एम॰ए॰ संस्कृत (उतरार्ध) की प्रथम श्रेणी में उतीर्ण की। आपने 1967 में हिन्दी में पी॰एच॰डी॰ की उपाधि प्राप्त की।

देववाणी परिषद्, दिल्ली के संस्थापक महासचिव तथा आधुनिक संस्कृत कविता की राष्ट्रीय धारा के सर्वाधिक लोकप्रिय एवं समर्थ कवि डॉ॰ शुक्ल 'अर्वाचीनसंस्कृतम' नामक त्रैमासिक पत्रिका के संस्थापक सम्पादक हैं तथा राजधानी कालेज, नई दिल्ली में हिन्दी के प्रवाचक पद से सेवानिवृत हुए हैं। 6 अप्रैल 2009 से राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान के मुख्यालय (दिल्ली) में आप शास्त्रचूड़ामणि विद्वान के रूप में कार्यरत हैं। अप्रैल 2012 तक आपका कार्यकाल है। आपने 'अर्वाचीनसंस्कृत-महाकाव्य-विमर्श (तीन खण्ड), 'अर्वाचीनसंस्कृत साहित्य-परिचय' (दो खण्ड), 'अर्वाचीनसंस्कृतम' संग्रह (तीन खण्ड) इनका सम्पादन किया।

सम्मान

डॉ॰ रमाकान्त शुक्ल जी की शिक्षा के क्षेत्र में की गई सेवाओं एवं साहित्यिक उपलब्धियों को भारत की केन्द्रीय सरकार एवं उत्तर प्रदेश की सरकारों ने सराहा है और पुरस्कारों से अलंकृत भी किया है। आपका शोधग्रन्थ ''जैनाचार्य रविषेणकृत पद्मपुराण और तुलसीकृत रामचरितमानस उतर प्रदेश शासन द्वारा 1974 में पुरस्कृत हो चुका है।

पुरस्कार प्राप्त होने के अतिरिक्त अनेकों प्रबुद्ध संस्कृत अनुरागियों ने डॉ॰ शुक्ल जी के नाटक 'पण्डितराजीयम्' की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। कतिपय मनीषियों के विचार निम्न हैं:

> "दिल्ली में संस्कृत नाटक अति प्रिय हो रहे हैं जिसका ताजा प्रमाण है कुछ दिन पहले 'श्रीराम संस्कृति कला केन्द्र' के प्रेक्षागृह में प्रस्तुत 'पण्डितराजीयम' के दर्शकों की बहुत बड़ी उपस्थिति। . .....नाटक की भाषा सहज और सरल थी, जिसको श्रुतिमधुर भी कह सकते हैं।"
>
> "आजकल", नई दिल्ली, मई 1983 ई॰।

> "राजधानी में संस्कृत नाटक यदा-कदा ही होते हैं, लेकिन जो होते हैं वे अपने भाषागत शालीन सौन्दर्य के कारण दर्शकों को अरसे तक याद रहते हैं। यह प्रस्तुति इसी तथ्य का प्रतीक थी। .....नाट्य बिम्ब सार्थक रूप से उभर कर सामने आये। आगरा और वाराणसी के दृश्यबंध तो वस्तुतः उनकी प्रतिभा के सजीव प्रमाण थे।
>
> नाटक की भाषा संस्कृत होने के बावजूद सहज थी। इसका एक कारण यह भी था कि कलाकारों द्वारा बोले गए संवादों में पाण्डित्यपूर्ण दबाव नहीं था। मंच सज्जा कथा के अनुरूप थी। छोटे लाल के संगीत स्पर्शों ने प्रस्तुति को सार्थकता प्रदान की।"
>
> "हिन्दुस्तान", 6 फरवरी 1983 ई॰।

व्यक्तित्व

किसी भी व्यक्ति की सम्पूर्ण शारीरिक विशेषताओं एवं मानसिक प्रवृतियों की समन्वित इकाई ही उसका व्यक्तित्व है। व्यक्तित्व के अन्तर्गत जिनकी परिगणना होती है, उनमें प्रेरणायें, प्रवृतियाँ, अनुभवजन्य मानसिक दशायें, रूचि, दृष्टिकोण, विचार, आदर्श एवं आदतें प्रमुख हैं। यद्यपि व्यक्तित्व के पक्ष अनन्त हैं पुनरपि तथ्यात्मक विभाजन में व्यक्तित्व तीन प्रकार हो जाता है: 1. शारीरिक, 2. मानसिक, 3. चारित्रिक।

यदि इन्हें व्यक्तित्व का प्रकार मात्र कहा जाय तो व्यक्तित्व को इनका सक्रिय संगठनमात्र कहा जा सकता है। कोई भी कलाकृति उसकी सर्जना करने वाले कलाकार के व्यक्तित्व के अनुरूप होती है। यदि हमें कलाकार के व्यक्तित्व का ज्ञान है तो उसकी कृति के मर्म तक पहुंचने में सहायता प्राप्त होती है। यह निःसंदिग्ध है कि कवि से उत्कृष्टतर कलाकार की सृष्टि ब्रह्माण्ड में नहीं हुई। आचार्य आनन्दवर्धन स्पष्ट शब्दों में कहते हैं "इस अपार-काव्य-संसार में कवि प्रजापति के समान है, वह जैसा चाहता है वैसे ही काव्य जगत् को बना डालता है।" पाश्चातय काव्यशास्त्री कालरिज का यह कथन कि "So he is, so he writes." (जैसा वह है, वैसा ही लिखता है।) आनन्दवर्धन भी कवि के स्वभाव के अनुरूप ही काव्य-सृष्टि को इस प्रकार स्वीकृति देते हैं "यदि काव्य में कवि श्रृंगारी है, तो सारा संसार रसमय हो जाता है, और यदि वह कवि वीतराग हो जाय, तो सारा संसार शुष्क (नीरस) हो जाता है।"

डॉ॰ शुक्ल के बहुआयामी व्यक्तित्व के निर्माण में प्रभु प्रेरित, रामसेतु के समान अनेक महान् विभूतियों तथा परिस्थितियों का योगदान रहा है। सर्वप्रथम तो पूर्व जन्मों के शुभ कर्म-फलानुसार उनका जन्म ही ऐसे आस्तिक, सम्भ्रांत, संस्कृत प्रेमी, ब्राह्मणत्व के संस्कारों से पूर्ण, सर्वत्र प्रतिष्ठित परिवार में हुआ, जिसकी ख्याति देववाणी की कृपा से अपने ही देश में नहीं अपितु विदेशों तक में रही है।

"आत्मा वै जायते पुत्रः" को चरितार्थ करते हुए, "आम के वृक्ष पर आम ही लगते हैं" इस लोकोक्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण आज के भौतिकवादी युग में, महानगरों में रहते हुए भी उनके सभी सुपुत्र पैतृक धरोहर को सुरक्षित रखने में कितने प्रयत्नशील हैं इसका अनुमान समय-समय पर आयोजित साहित्यिक कार्यक्रमों में चारों भाईयों द्वारा तन, मन, धन से पूर्णतः समर्पित, सद्व्यवहार युक्त योगदान से लगाया जा सकता है।

डॉ॰ रमाकान्त शुक्ल जी का शरीर स्वस्थ तथा सुन्दर एवं उससे भी कही अधिक उदार मन के धनी हैं। उनकी वाणी ओजपूर्ण है, जिसने उनके व्यक्तित्व में चार-चाँद लगा दिए हैं। उनके व्यक्तित्व की श्रीवृद्धि करनें में यथा नाम तथा गुण को सार्थक करने वाली उनकी धर्मपत्नी, लक्ष्मीस्वरूपा वंदनीया श्रीमती रमा शुक्ला का योगदान कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। उनके सुपुत्रों का आगन्तुक से मधुरवाणी में वार्तालाप एवं सेवाभाव महानगरों की यात्रा से उत्पन्न क्लांति को इसी प्रकार विश्रांति में परिवर्तित कर देता है जैसे तृषित चातक को स्वाति-बूँद ही मिल गई हो।

"सादा जीवन, उच्च विचार" की साक्षात मूर्ति डॉ॰ शुक्ल जी का वेशभूषा के प्रति आधुनिक दृष्टिकोण भी है। वे शर्ट, पैन्ट, सूट इत्यादि पहनते थे। विद्यार्थी जीवन में वे पैन्ट, शर्ट पहनते थे तथा संस्कृत कवि सम्मेलनों में वे श्वेत धोती कुर्ता पहनना ही पसंद करते थे। डॉ॰ शुक्ल जब शुभवस्त्रावृता सरस्वती देवी के वरद पुत्र की भांति श्वेत (धोती कुर्ता) धारण करके संस्कृत कवि सम्मेलनों में सिंहनाद करते हैं तो श्रोता ही नहीं अपितु विद्वान् कविगण भी उनके व्यक्तित्व से प्रभावित हुए बिना नहीं रहते।

चहुँमुखी प्रतिभा से सम्पन्न डॉ॰ शुक्ल स्वयं को लेखन तथा पाठन तक ही समर्पित नहीं रख सके अपितु गंधर्व विद्या, वीणावादन में भी अपनी रूचि दिखाते थे। शरीर के सौष्ठव के लिए व्यायाम के प्रति रूचि आदि गुणों ने उनके व्यक्तित्व में सोने में सुहागे का कार्य किया है।

शुक्ल जी निराभिमानी हैं तथा साथ ही वे दूसरों की सहायता करने में बड़ा आनन्द अनुभव करते हैं। उनका शोधग्रन्थ "जैनाचार्य रविषेण कृत पद्मपुराण और तुलसीकृत रामचरितमानस" उतरप्रदेश शासन से पुरस्कृत हो चुके हैं। इतना अभिनन्दन समारोह होने पर और उपाधियों से अलंकृत होने पर भी उनमें अभिमान लेशमात्र भी न था। डॉ॰ शुक्ल अपनी निरभिमानिता एवं नैसर्गिक कोमलता के कारण ही अपने से वरिष्ठ एवं कनिष्ठ पीढ़ी में समान रूप से समादृत हुए हैं।

"विद्या ददाति विनयं, विनयाद् याति पात्रताम्" का उदाहरण भी डॉ॰ शुक्ल जी के व्यक्तित्व में पूर्णतः परिलक्षित होता है। उनके यहां आयोजित होने वाले धार्मिक तथा साहित्यिक अनुष्ठानों में सम्मिलित होने वाले परिचित, जो उनसे आयु तथा विद्या में भी कम होते हैं, का तन, मन, धन से सत्कार श्रीकृष्ण द्वारा युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में किये व्यवहार का स्मरण करा देता है।

सर्जनात्मक प्रतिभा के धनी होने के साथ-साथ वे एक सच्चे देशभक्त भी हैं। देश की यथार्थ स्थिति का वर्णन करते हुए उसकी समस्याओं को उन्होंने अपने काव्यों में उठाया है। उनकी रचनाओं से स्पष्ट है कि दलित और शोषित वर्ग

के प्रति उनमें करूणा और सहानुभूति की भावना थी। जिसका प्रमाण है: 'भाति मे भारतम्', 'जय भारतभूमे', 'अहं स्वतंत्रता भणामि', 'भारत जनताऽहम', 'राष्ट्रदेवते'।

इस प्रकार शुक्ल जी देशभक्ति, साहित्य-प्रेम, निराभिमानिता आदि सभी गुणों से परिपूर्ण एक उच्च व्यक्तित्व के धनी हैं।

कृतित्व

शुक्ल जी संस्कृत साहित्य के मर्मज्ञ थे। शुक्ल जी ने अध्ययन, अध्यापन एवं शोध करते हुए, अर्वाचीनसंस्कृतम् जैसी त्रैमासिक संस्कृत पत्रिका की महनीय पदगरिमा को सँवारते हुए जितनी रचनाओं से संस्कृत वाङ्.मय की श्रीवृद्धि की है, वह अद्भुत है। इन्होंने जहाँ संस्कृत में काव्य निर्माण किया, वहीं हिन्दी में भी ग्रंथ रचे। इन्हें अंग्रेजी का भी ज्ञान प्राप्त है।

शुक्ल जी की रचनाओं से हिन्दी और संस्कृत दोनों भाषाओं का साहित्य समृद्ध हुआ है, जिनका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है:

1. कवितायं - अर्वाचीन संस्कृतम् में प्रकाशित

भाति मे भारतम्

'भाति मे भारतम्' डॉ॰ रमाकान्त शुक्ल प्रणीत एक राष्ट्रीय भाव प्रधान शतक काव्य है। इसके 108 श्लोंकों में भारत की श्लाघनीय महता का प्रतिपादन किया गया है। यह संस्कृत काव्य अप्रैल एवं अक्टूबर, 1980 में प्रकाशित हुआ। यह कविता देवी अहिल्या विश्वविद्यालय की एम॰ए॰ संस्कृत की कक्षा में पाठ्यत्वेन निर्धारित, रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय एवं कुमायूँ विश्वविद्यालय की बी॰ए॰ की कक्षा में तथा जगन्नाथ संस्कृत विश्वविद्यालय की शास्त्रिकक्षा में पाठयत्वेन निर्धारित है। यह काव्य आकाशवाणी और दूरदर्शन से सचित्र प्रसारित भी हुआ है। काव्य की भाषा सर्वत्र प्रान्जल और सुमधुर है। पदावली कोमल, सानुप्रास तथा सुबोध होने के साथ-साथ हृदयग्राही भी है। माधुर्य गुण के व्यंजकवर्ण यथेष्ट मात्रा में उपलब्ध होते हैं। क्लिष्टता का सर्वथा परिहार होने के कारण भाषा प्रसादमयी है। अनुप्रास कवि को प्रिय है। काव्य का शीर्षक 'भाति मे भारतम्' भी सानुप्रास ही है। अर्थालंकारों में प्रायः मुख्य अलंकारों का ही प्रयोग हुआ है। स्रग्विणी छन्द में लिखा गया यह काव्य भारत के सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप को उद्घाटित करता है। वस्तुतः इस काव्य को पढ़कर पाठक भारत के प्रेम में रंग जाता है। भारत की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए कवि भारतीयों के मन में राष्ट्रीय चेतना का उद्बोधन करता है। इस प्रकार 'भाति मे भारतम्' कवि का प्रसिद्ध लोकप्रिय राष्ट्रीय विचारों से ओत-प्रोत राष्ट्रीय भावनापरक शतक काव्य है।

'भाति मे भारतम्' के अतिरिक्त डॉ॰ शुक्ल की अनेक ऐसी कविताएं हैं, जिन्होंनें डॉ॰ शुक्ल को संस्कृत साहित्य जगत् में प्रसिद्ध बना दिया। उदाहरणार्थ - सुरभारती विजयते, राजस्थानम्, उज्जयिनीयं जयति, भाति मौरीशसम्, राष्ट्रदेवते। भारतजनताऽहम्, अहं स्वतंत्रता भणामि, रौति ते भारतम, मेघप्रबोधनम, अकालजलद, स्वागतं पयोद ते, नेहरूं तं स्मरामो वयं सादरम, एकं सद्बहुधा विलोक्यते भारतम, जाबालिपुरं-चल, उत्तरमंगलम्, वदत नेतारो मनाक्, जय भारत-भूमे आदि।

2. नाटक (नाट्य साहित्य)

विविधानन्दभूमि देववाणी के कोमल आक्रोड में विलसित होता हुआ नाट्य साहित्य अपने वैशिष्ट्य से विश्व प्रतिभा को चमत्कृत करता रहा है। कालिदास से लेकर अद्यतन साहित्य मनीषियों तक संस्कृत नाटक अपने भाव, कथ्य,

शैली और रस-पेशलता के लिए स्वयं अपने निदर्शन बनते रहे हैं। दूसरी ओर भरत, भामह, वामन, आनन्दवर्धन, मम्मट, धनन्जय इत्यादि आचायों ने शास्त्रीय निकष पर नाटक के स्वरूप् का ऐसा विशद परीक्षण किया, जिससे संस्कृत-नाटक अलंकृत शुद्ध स्वर्ण की भांति विश्व-साहित्य में अपना स्थान बना सके। अभिनव संस्कृत नाटककारों में रमाकान्त शुक्ल अपने नाटकों के कारण 1990 के दशक में बहुचर्चित रहे हैं। डॉ॰ शुक्ल ने अनेक नाटकों की रचना की जिनका वर्णन इस प्रकार हैः

पण्डितराजीयम्

डॉ॰ रमाकान्त शुक्ल प्रणीत संस्कृत नाटक 'पण्डितराजीयम्' पण्डितराज जगन्नाथ के ऐतिहासिक, प्रेम कथा के ताने बाने को लेकर बुना गया एक ऐतिहासिक नाटक है, जिसमें एक ओर सत्रहवी शताब्दी के संस्कृत कविता-कामिनी के विलास पण्डितराज जगन्नाथ का एक यवनी रमणी से अनुराग चित्रित किया गया है, तो दूसरी ओर जाति संप्रदाय एवं धर्म की सीमाओं को पीछे छोड़ती नारी के मन की कोमलतम अभिव्यक्ति प्रेम का मर्मस्पर्शी दृश्यांकन किया गया है। यह नाटक जुलाई, 1984 में प्रकाशित हुआ। इस नाटक में भावों की मधुरता के साथ भाषा की थिरकाहट एवं चूर्णकता मन को मोह लेती है।

नाटककार का 'पण्डितराजीयम्' नाम रखने का एकमात्र उद्देश्य नाटक में पण्डितजगन्नाथ का सर्वतोमुखीन सर्वोत्कृष्ट व्यक्तित्व है। सम्पूर्ण नाटक नायक के गुणों से मानो अभिभूत सा होकर परिक्रमा करता हुआ प्रतीत होता है। वह पण्डितराज जगन्नाथ के पाण्डित्य और चारित्रिक उदाता वैशिष्ट्य का प्रतिबिम्ब मात्र है। यह शीर्षक लेखक के नाट्य कौशल का परिचायक है।

पुरश्चरणकमलम्

'पुरश्चरणकमलम' महाराणा निराला की सुप्रसिद्ध हिन्दी-कविता 'राम की शक्ति-पूजा' भाषानुवाद है। इसलिए इसका कथानक मूल कविता से भिन्न नहीं है। डॉ॰ रमाकान्त शुक्ल प्रणीत यह नाटक जुलाई सन् 1984 में प्रकाशित हुआ। प्रस्तुत नाटक में राम और रावण के युद्ध पर प्रकाश डाला गया है तथा रावण को पराजित करने के लिए राम ने एक सौ आठ कमलों द्वारा पूजा का आयोजन किया है। रमाकान्त शुक्ल का प्रस्तुत नाटक में एकमात्र उद्देश्य यह है कि जो सन्मार्ग पर प्रवृता रहकर भी पराजय का अनुभव करने लगते हैं और दुराचारियों को फलता-फूलता हुआ देखते हैं, राम के जीवन की घटना के द्वारा रचनाकार उनके हृदयों में आशा का संचार करना चाहता है।

अभिशापम्

'अभिशापम्' की कथावस्तु महाभारत से गृहीत है। दातव्य संदेश के अनुरूप डॉ॰ शुक्ल ने अपनी कल्पना के बल पर उसमें यत्र तत्र तिकंचित् संशोधन ओर संवर्धन भी किया है। प्रस्तुत नाटक में रचयिता ने मदिरा (सुरा) का सेवन करने वाले दैत्य गुरू शुक्राचार्य का वर्णन किया है तथा बाद में शुक्राचार्य द्वारा सुरा की निन्दा करने का भी मार्मिक वर्णन किया गया है। नाट्यकार ने 'प्रस्तावना' में सुरापान से होने वाली हानियों का उल्लेख किया है।

विक्रमोर्वशीयम्

जैसा कि शीर्षक से ही स्पष्ट है 'विक्रमोर्वशीयस्य ध्वनिनाट्यरूपान्तरम्' संस्कृत के महान् नाटककार कालिदास के नाटक 'विक्रमोर्वशीयम्' का ही ध्वनिरूपक में रूपान्तरण है। नाटक की कथावस्तु भी वही है। यह नाटक 1989 में प्रकाशित हुआ। यह नाटक आज भी महत्वपूर्ण समस्या-नारी के अपहरण और बलात्कार की समस्या पर प्रकाश डालता है। नारी की इच्छा के विरूद्ध उसका अपहरण और उसके साथ बलात्कार करने वाले लोगों को उचित

दण्ड मिले, यही इस नाटक का संदेश है। नाटककार ने उन दानव रूप लोगों की भर्तस्ना की है जो किसी सुन्दरी का बलपूर्वक अपहरण करते हैं।

आलोकिनी

आलोकिनी में रामकथा का संक्षेप में प्रस्तुतिकरण है। डॉ॰ शुक्ल ने इस नाटक में रामकथा को संक्षेप के साथ प्रस्तुत किया है। लंका विजय के उपरान्त राम के अयोध्या आने पर उनका राज्याभिषेक किया जाता है और इसी उपलक्ष्य में अयोध्या में एक मास के लिए दीपमालिका का आयोजन किया जाता है। यह दीपमालिका ऊँच-नीच, धनी-निर्धन आदि सभी के घरों को आलोकित करती है। इसलिए इसका नाम आलोकिनी है। यह नाटक सन 1989 में प्रकाशित हुआ।

दाराशिकोहीयम्

दाराशिकोहीयम में महामानव दाराशिकोह का आख्यान प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत नाटक की कथावस्तु का आधार ऐतिहासिक है। प्रस्तुत नाटक में दाराशिकोह को महापुरूष के रूप में चित्रित किया गया है वहीं दूसरी ओर उनके भाई औरंगजेब को धर्मान्धता की साक्षात् प्रतिमूर्ति के रूप् में चित्रित किया गया है।

अप्रकाशित रचनायें

डॉ॰ शुक्ल द्वारा रचित 'मजबूत धागे' एक हिन्दी नाटक है जो आकाशवाणी से 1972 में प्रसारित हुआ। इस प्रकार डॉ॰ शुक्ल की अन्य अनेक स्फुट कवितायें, रेडियो वार्ताएं तथा शोध-पत्र आदि अप्रकाशित रचनाएँ हैं।

इस प्रकार डॉ॰ शुक्ल ने अपने को साहित्य की विविध धाराओं से जोड़त हुए समाज, राष्ट्र, संस्कृति एवं संस्कृत के लिए प्रभूत सर्जना की है। उनकी रचनाओं की जीवन्तता एवं सम्प्रेषणीयता से कोई तटस्थ हो ही नहीं पाता है। यही कारण है कि संस्कृत विधा के सभी मंचों पर उनका हर एक श्रोता से सीधा हार्दिक सम्बन्ध बन जाता है। मंच उनका हो जाता है और वे उसके बेताज बादशाह हो जाते हैं।

सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची

[1] अग्निपुराण, महर्षि वेदव्यास, बलदेव उपाध्याय, चैखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस, वाराणसी, प्रथम संस्करण, 1966।
[2] अभिज्ञानशाकुन्तलम, कालिदास, पद्मश्री डॉ॰ कपिलदेव द्विवेदी, आचार्य (प्रणेता)।
[3] आर्यासप्तशती, गोवर्धनाचार्य, चैखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1965।
[4] उज्ज्वलनीलमणि, रूपगोस्वामी, महामहोपाध्याय पण्डित दुर्गा प्रसाद शर्मा (व्याख्या), चैखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, वाराणसी, 1985।
[5] काव्यमीमांसा, राजशेखर, डॉ॰ रमाशंकर त्रिपाठी (संपा॰), मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 1973।
[6] काव्यादर्श, दण्डी, प्रो॰ योगेश्वरदत्त शर्मा (संपा॰), नाग पब्लिशर्स, जवाहर नगर, दिल्ली, 1999।
[7] काव्यानुशासन, हेमचन्द, महामहोपाध्याय पं॰ शिवदता व काशीनाथ पांडुरंगा परब (संपा॰), मेहरचंद लछमनदास पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1986।
[8] काव्यालंकार, भामह, प्रो॰ देवेन्द्रनाथ शर्मा (संपा॰), बिहार राष्ट्रभाषा।
[9] काव्यालंकार, रुद्रट, श्री रामदेव शुक्ल (संपा॰), चैखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
[10] छन्दःसूत्रम, संस्कृत भाष्यकार, गुरूकुल वृंदावन, स्नातक: श्रीमदाखिलानन्द शर्मा (शोध संस्थानान्तर्गत)।
[11] कविरत्नम्, आचार्य धर्मेन्द्रनाथ शास्री, प्राच्य-विद्यापीठ, तरूण एन्कलेव, नई, दिल्ली।